REVIEW OF RESEARCH

IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X

VOLUME - 8 | ISSUE - 4 | JANUARY - 2019

पंचायतों की भारतीय महिलाओं के राजनैतिक जागरण में भूमिका

अनिल कुमार

शोध छात्र , इतिहास, कु. मायावती राजकीय पी.जी. कॉलेज, बादलपुर, गौतमबुद्ध नगर.

प्रस्तावना :

प्राचीनकाल में पंचायतो या अन्य प्रकार के स्थानीय शासनों को राज्य सरकार या प्रशासन का एक अभिकरण मात्र माना जाता था, किन्तु पंचायती राज को वर्तमान भारत में लोकतंत्र के विकास के लिये एक प्रक्रिया के रूप में अपनाया जाना अत्यन्त आवश्यक सा हो गया।[1] पंचायती राज का अर्थ एक शासन पद्धति है, यह गांव पंचायतो का जाल सा है। ऊपर से नीचे देखें तो यह पंचायत से निकल रहा एक अंग है जो बढ़कर राष्ट्रव्यापी हो रहा है। इसका निर्णय सार्वलौकिक या कम से कम सर्वसम्मत होता है। इसमें राजनीतिक शास्त्रार्थ की गुंजाइश नहीं है। पंचायती राज के नये सिद्धान्त के रूप में माना गया है, इसका अर्थ परस्पर विचार—विमर्श के आधार पर शासन स्वीकृति व सर्वसम्मति है।[2] पंचायती राज निःसंकोच प्रशासन की वह परिवर्तित पद्धति होगी, जिससे प्रशासनिक अभिकरणों का विकेंद्रीकरण होगी, शासन के विभिन्न अभिकरणों की कार्य पद्धतियों में सामंजस्य होगा, प्रशासनऔर अधिक उत्तरदायी बनेगा और ग्रामीण जनता को शासन में भाग लेने का अवसर मिलेगा।[3] पंचायती राज प्रशिक्षण देकर नेतृत्व तैयार करने तक ही सीमित नही माना जा सकता और न ही सामुदायिक विकास में एक सहायक मात्र, बल्कि सर्वोच्च कार्यक्रम के एक मुख्य अंग के रूप में हमारे सामने आता है। इसका मूल्यांकन और आगे बढ़कर राजनीतिक क्रान्ति के रूप में किया जा सकता है। जो लोगों के लिये महत्वपूर्ण अर्थ रखती है।[4] श्री जय प्रकाश नारायण तो इसे वर्तमान सामाजिक व्यवस्था का एक अंग ही नही बल्कि उसका अग्रदूत मानते है।[5] एस0 के0 डे ने पंचायती राज को आर्थिक, राजनैतिक तथा सामाजिक लोकतंत्र हेतु एक बहुउद्देशीय संस्था माना है।[6]

पंचायती राज के उद्देश्यः—

स्वतंत्रता के पश्चात् परम्परागत प्राचीन संस्था, पंचायत को पुनर्गठित करके उसमें नवीन विचारों का सूत्रपात किया गया और पंचायती राज संस्थाओं से यह प्रत्याशा की गयी थी कि, इससे ग्रामीणों में विकास कार्यों के लिये उत्साह आयेगा तथा राजनीतिक एवं विकासात्मक चेतना के द्वारा ग्रामीण सक्रिय और जागरूक होगें। सक्रियता की इस प्रक्रिया के कारण लोगों में परिव्याप्त उदासीनता समाप्त होगी तथा वे जन कल्याण में लगेंगे। उन्हें अपनी समस्याओं का आभास होगा और वे उसके समाधान के लिये प्रयत्नशील होंगे, बिना उत्तरदायित्व एवं अधिकारों के विकास कार्यो में प्रगति नही हो सकती। किसी समुदाय का विकास सही अर्थो में तभी हो सकती है जब वह समुदाय अपनी समस्याओं को समझे, अपनी जिम्मेदारियों को महसूस करें तथा स्थानीय शासन पर सतत् बौद्धिक सतर्कता बनाये रखें।[7]

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में पंचायती राज का प्रारम्भ तीन प्रमुख उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया गया, जो निम्नलिखित हैं :—

1. पंचायती राज का वास्तविक एवं तात्कालिक उद्देश्य सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का प्रसार एवं उन्हें क्रियान्वित करने का रहा है। पंचायती राज एक तरफ अपने में लोगों की पहल एवं उनकी वास्तविक सहभागिता

का समाविष्ट करता है। तो दूसरी तरफ सरकारी वित्तीय सहायता तकनीकी सुविधा और पर्यवेक्षण से इसे संयुक्त करता है।[8]

2. पंचायती राज का दूसरा उद्‌देश्य यह है कि, इसके द्वारा लोगों को जागरूक करके जाति, वर्ण, धर्म धौर धन के आधार पर निर्मित होने वाले नेतृत्व को परिवर्तित किया जाय। पंचायतीराज की स्थापना से यह प्रत्याशा की गयी थी कि, चुनावों का अवधि में परम्परागत नेतृत्व के स्थान पर नया नेतृत्व उभरकर सामने आयेगा।[9]

3. पंचायतीराज का तीसरा प्रमुख उद्‌देश्य, ऐसी परम्परागत स्वायत्तशासी संस्थाओं की स्थापना करना है, जिससे कि वह सच्चे लोकतंत्र का प्रतीक करने की संस्तुति की थी।[10] लोकतंत्र की किसी भी सच्ची व्यवस्था का आधार स्थानीय स्वशासन ही है क्योंकि जब तक लोकतंत्र का इस नीचे के स्तर के आधार पर निर्माण नहीं किया जायेगा, तब तक शिखर पर वह सफल नही होगा। एस0 के0 डे की भावना के अनुसार, ''पंचायती राज सरकार की एक इकाई होकर जीवन बिताने का एक ढंग हो जायेगा और सरकार के प्रति एक नयी दृष्टि का सूचक होगी'' यह हमारी जनता को ग्राम सभा के लेकर लोक सभा तक एक कड़ी के रूप में पिरो देगा।[11] के0 एस0 वी0 रमन ने पंचायती राज के बारे में तीन सिद्धान्त बताये, जो अधोलिखित है।[12]

1. पंचायती राज व्यक्ति और समाज के बीच की विशेष समस्याओं के प्रबन्ध द्वारा अच्छे सम्बन्ध स्थापित करता है। व्यक्ति को समाज में भाग लेने की भावना का विकास करता है। ग्रामीण लोगों को राजनीतिक शिक्षा देता है, और देश की नागरिकता में उपयोगी बनाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग अदा करता है।

2. पंचायती राज सरकार के लिये स्वयं शासित इकाई के रूप में कार्य कर सके। इसकी स्थापना इसी उद्‌देश्य से है, कि लोक कल्याण के लिये लोक प्रशासन की मशीनरी को उपयोगी बनाया जा सके, ताकि विस्तृत रूप से फैले हुये कार्यों को लोक कल्याणकारी सरकार नियोजित अर्थव्यवस्था के द्वारा पूरा कर सके।

3. पंचायतीराज लोगों का ध्यान प्रशासन के स्वामियों से हटाने के लिये राजनैतिक पद्धति के रूप में कार्य कर सके। इसका वास्तविक उद्‌देश्य जनता को अधिक शक्ति का हस्तानान्तरण नहीं है। अपितु राजनीतिक पार्टियों के प्रभाव का गांव तक विकास करना है, जो कुछ पाटियाँ खो चुकी है।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह तथ्य प्रकाश में आता है कि, पंचायतीराज की स्थापना के समय उसका उद्‌देश्य विकास की एक एजेन्सी की तरह समाज का चहुमुंखी विकास करना था। वस्तुतः ग्रामीण जनता में जागरूकता, चेतना, सहभागिता उनकी समस्याओं का निरूपण तथा सर्वागीण विकास ही पंचायती राज का प्रमुख उद्‌देश्य है।

महिलाओं के राजनीतिक जागरण का इतिहास–

प्राचीन ग्रन्थों में स्त्री के स्वरूप विश्लेषण से ऐसा प्रतीत होता है कि स्त्री की सामाजिक भूमिका भिन्न–भिन्न युगों की वास्तविकताओं के अनुरूप रही हैं। भारत में अनन्तकाल से सैद्धान्तिक रूप में नारी को नवाजा गया है और उसका आदर हुआ है। हिन्दू आदर्श के अनुसार स्त्रियाँ अर्द्धांगिनी कही गयी है। हिन्दू समाज में मातृत्व का आदर है। सर्वनियन्ता भगवान की शक्तियों का लक्ष्मी, सरस्वती, दुर्गा, काली आदि रूपों में ही वर्णन किया गया है। इस प्रकार नारी शक्ति धन और ज्ञान का प्रतीक मानी गयी हैं वह हमारी राष्ट्रीयता (भारत माता) की प्रतीक है, परन्तु यह सब होते हुए भी व्यवहारिक रूप में भारत में नारी की स्थिति विरोधाभास पूर्ण रही हैं। परम्परा से नारी को शक्ति का रूप माना गया है किन्तु आम बोलचाल में 'अबला' कहा जाता है। हिन्दू समाज में नारी की स्थिति परिवर्तनशील रही है।[13] समाज में उनके उत्थान का विभिन्न रूपों में निरूपित किया गया है तथा सभ्यता के विभिन्न चरणों में उनकी स्थिति के बारे में परस्पर विरोधी विचार प्रचलित है।[14] एक ओर उसे दास अथवा बोझ ढोने वाले पशु जिसकी नियति ही कठिन परिश्रम करना है– से जरा ही अच्छी मानी गयी है। उसे पशु के समान बेचा अथवा उसके साथ पशुवत व्यवहार किये जाने के योग्य माना गया है।[15] दूसरी ओर जो लोग जातियों की उत्पत्ति मातृ प्रधान परिवार को मानते है वे स्त्री को निर्विवादित सपरिवार की मालकिन मानते है।[16] किन्तु मनुष्यों की बहुसंख्या को देखते हुए, यह दोनों ही विचार वास्तविकता से बहुत परे है।[17] स्त्री के समाज के साथ सम्बन्धों में इतनी विभिन्नतायें है कि कोई भी सामान्य विचार करने से पूर्व अत्यन्त सावधानी आवष्यक है। वास्तव में उसकी उपयोगिता पारिवारिक जीवन में साधन सम्पन्नता, ताजगी प्रदान करने वाली तथा बच्चों की प्रेमपूर्वक देखभाल करने वाली के रूप में उसके पति के लिये वरदान स्वरूप रही हैं और हैं। और यही विशेषतायें सभ्यता के विभिन्न चरणों में समाज में उसका स्थान निर्धारित करती है। पुरुष की

अध्ययन की पूर्णता के लिये नारी का अध्ययन आवष्यक है। किन्तु नारी अध्ययन के लिये पुरुष का अध्ययन आवष्यक नही है।[18] वास्तव में स्त्री के बारे में हर समाज, देश, सामाजिक स्तर, वातावरण, समय तथा जनसंख्या समूह में पुरुष की स्थिति के सन्दर्भ में ही कहा गया है।[19]

जब कोई ऐसी धारणा बनाता है कि समाज में नारी का अपना अलग स्थान हैं तो ऐसा विचार व्यक्त करते समय वह पुरुष एवं नारी के बीच पाये जाने वाले अन्तरों की तुलना कर रहा होता है। किन्तु ऐसा करना नारी के अध्ययन के कार्य को सुगम नही बनाता क्योंकि सम्भवतः स्त्रियों के विषय में कुछ कह पाने से पूर्व लोगों में पायी जाने वाली लैंगिक समानता के अलावा उनमें पायी जाने वाली विभिन्नताओं पर भी विचार आवश्यक है।[20] प्राचीन भारतीय ऐतिहासिक समय में पुत्री का जन्म स्वागत योग्य नहीं माना जाता था, किन्तु इससे माता–पिता भयभीत भी नही होते थे। छोटी आयु में विवाह का नियम नही था। राजपरिवारों की पुत्रियों को प्रशासनिक तथा सैनिक प्रशिक्षण दिया जाता था। वो लड़को के समान ही शिक्षा की अधिकारिणी थी और इस संबंध में उनकी महत्वाकांक्षाओं पर कोई प्रतिबंध नहीं था। जीवन साथी चुनने का पुत्र तथा पुत्री को समान स्वतंत्रता तथा अवसर प्राप्त था।[21]जहाँ विवाह के बाद पुत्रियों तथा बहनो के परिवार की सदस्य संख्या घटती है वहीं विवाह के बाद आने वाली महिलाओं से वृद्धि होती है।[22] विवाह के बाद पुत्र के जन्म देने वाली स्त्री का घर में स्थान काफी ऊंचा हो जाता है। सामान्यता कहा जाये तो मुसलमानों के आगमन से पूर्व हिन्दू नारी का स्थान बेहतर था। मध्यकाल में भारतीय नारी की स्थिति में निरन्तर ह्रास का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अनेक कारण थे।[23] लड़कियों को पवित्रता तथा प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए कम उम्र में विवाह का नियम हो गया। हिन्दू कानून में उन्हें असमान अधिकार तथा भेदभाव का विधान किया गया।[24] विवाह, वैवाहिक स्तर, तलाक, बैधव्य तथा उत्तराधिकार के मामले में भेदभाव किया गया।[25]

संयुक्त हिन्दू परिवार में पिता, परिवार का मुखिया होता है। जन्म के साथ ही पुत्र को परिवार की सम्पति प्राप्त करने का हक प्राप्त हो जाता है। लड़कियों को ऐसे अधिकार नही मिलते। उसे केवल भरण–पोषण का हक हैं। एक पुत्रहीन विधवा को पुनर्विवाह करने या मृत्युपर्यन्त पारिवारिक सम्पत्ति में हिस्सा मिलता है।[26] पुरूष सदस्यों की स्वीकृति के बिना पिता सम्पत्ति को हस्तानान्तरित नहीं कर सकती वह सम्पत्ति के बिकने से उसकी रक्षा करती है। साधारणतया वह पिता विवश है अपने पुत्रों के प्रबंध के लिये क्योंकि उत्तराधिकार का नियम है कि जब उसे पुरी तरह अधिकार सम्पत्ति अलगाने का नहीं मिल जाता वह उस कार्य को नही कर सकता।[27] सन् 1950 के दशक में बहुत कम स्त्रियां शिक्षित थी। सन् 1957 के बाद तो महिला साक्षरता इतनी कम हो गयी कि मुश्किल से सौ में एक स्त्री पढ़–लिख सकती थी।[28]

इसका कारण सामाजिक तथा धार्मिक कुप्रथायें, दुर्भाग्यशाली रीतिरिवाज, अविवेकपूर्ण धार्मिक अनुष्ठान तथा अमानवीय अन्धविष्वास थे। इसके अतिरिक्त हिन्दू समाज में प्रचलित कुरीतियां जैसे बाल विवाह थोपी गयी। वैधव्यता, सती तथा देवदासी प्रथा, पर्दा, दहेज, बच्चियों का वध, बहु पत्नीवाद, जाति प्रथा आदि ने हिन्दू समाज को अप्रगतिशील बना दिया। जिसमें स्त्रियों के लिए कोई स्थान नही था। हिन्दू स्त्री की स्थिति निराशाजनक थी।

हिन्दू समाज के व्याप्त अमानवीय क्रूर तथा असभ्यतापूर्ण सामाजिक और धार्मिक कुरीतियों के परिप्रेक्ष्य में हिन्दू नारी की सामान्य स्थिति को जाना जा सकता है। प्रचलित सामाजिक ढाँचे में पुरूषों को अधिक स्वतंत्रता थी। यह प्रथायें मध्यकाल की देन थी।[29]प्राचीन काल में एक पुत्री के जन्म लेने पर उसकी पूरी देख रेख होती थी और पुत्र के समान ही उसे भी शिक्षित किया जाता था, लेकिन बाद में कुछ सामाजिक बुराइयों के पैदा हो जाने से शिशु हत्या हिन्दू समाज में प्रचलित हो गयी।[30] बहुत से हिन्दू भारत में जन्म के तुरन्त बाद अपनी पुत्रियों की हत्या कर देते थे।[31] पुत्र द्वारा ही माता–पिता की अन्तिम क्रिया थी। पुत्री अपने माता–पिता पर भार समझी जाती थी। उसके लिये वर ढूंढ़ने से दायित्व और बढ़ जाता था। किसी बच्ची की हत्या करना मानसिक, सामाजिक तौर पर वातावरण का एक अंश हो गया था। यह लोगों के लिये आष्चर्य का विषय नहीं रह गया था। यह सम्पूर्ण हिन्दू जाति में नही प्रचलित थी, अपितु राजपूत और जाट के लिये यह साधारण बात थी। पंजाब में यह प्रत्येक स्थान पर प्रचलित था।[32] बच्चों की हत्या करने के लिये उसे जहर खिलाया जाता था या दूध में मिलाकर पिलाया जाता था। कभी–कभी तो मां के स्तन में जहर की एक परत प्रयोग में लायी जाती थी, जिससे दूध पीते समय बच्ची की मृत्यु हो जाती थी।[33]

प्रत्यक्षतः इस प्रकार के अमानवीय आत्तरकों ने भारत के नये शासन ब्रिटिश अधिकारियों को बहुत आन्दोलित किया। उन्होंने इन कुरितियों को दूर करने के लिये भारतीय राजाओं से लिखित प्रतिज्ञा पत्र लेना आरम्भ किया। सन् 1870 में ब्रिटिश सरकार ने शिशु हत्या निरोधक एक घोषणा पत्र जारी की।[34] इस कानून के अन्तर्गत माता–पिता के लिये बच्चे के जन्म को चाहे वह पुत्र हो या पुत्री दर्ज कराना आवष्यक कर दिया गया। इस कानून को कड़ाई से लागू किया गया।[35] सामाजिक विस्तार के लिये अनेक हिन्दू सुधारको ने, जिन्होने पष्चिमी भाषा और संस्कृति का अध्ययन किया था, शिशु हत्या का प्रबल विरोध किया। इतना ही नही बल्कि हिन्दू समाज का कानून और व्यवस्था असमान होने के कारण उसके विरोध में अधिकाधिक ईसाई धर्म युद्ध शुरू हुआ।[36] हिन्दू समाज ने महिलाओं की दशा को आगे की कुछ शताब्दियों में और गिराया, जो 19वीं शताब्दी के लगभग (प्रारम्भिक वैदिक समय) और बदतर हालत में पहुंच गया, यह उस समय हुआ जबकि महिलाओं ने पुरूष के अधीनस्थ के रूप में अपने को प्रस्थापित किया। कानून लिंग भेद की समानता और महिला पुरूष के अधिकार को समान स्वीकार नहीं करता था। समाज में सारे अधिकार तथा स्वतंत्रता केवल पुरूषों को प्राप्त थी महिलायें इससे वंचितरखी गयी। पुरूषों तथा महिलाओं के व्यक्तिगत तथा सामाजिक आचरण के निर्णय हेतु भिन्न पैमाने थे।[37]

नारी को अपने अज्ञान, बाल विवाह, कम उम्र में मां बनना थोपी गयी वैध्व्यता तथा पुरूष के उपर निर्भरता के कारण कष्ट सहना पड़ा, सम्भवतः स्त्रियों की इस सामाजिक अवनति का सबसे खराब पहलू उनके भयानक कष्ट तथा सामाजिक स्तर में गिरावट थे। यही कारण था नारी की मुक्ति तथा शिक्षा जैसे विषयों ने हर समाज सुधारक का ध्यान आकर्षित किया। बाल विवाह हिन्दू समाज के नैतिक तथा भौतिक अवनति का मूल कारण था। दुर्भाग्यवश इसे शताब्दियों तक समाज द्वारा अपनाये रखा गया। बराबर के बच्चों में होने वाला यह बाल विवाह कमजोर और दुःखी माता–पिता द्वारा रचा गया था। प्रारम्भिक त्रुटि जो कि दबाव डालकर जल्दी विवाह के द्वारा लड़के को पिता और लड़की को माता बनने को मजबूर करता था, जिसका अपरिपक्व पिता और अपरिपक्व माता के रूप में परिणाम निकलता था। क्योंकि हिन्दूओं में पूरी तरह से परिपक्व पुरूष और स्त्रियों के बीच विवाह बहुत कम था। हिन्दुओं में बढ़ती हुयी विधवाओं की संख्या के लिये बाल विवाह उत्तरदायी था। बचपन में विवाह के कारण बच्चों की मृत्युदर बहुत अधिक थी।[38]

इन अतार्किक प्रथाओं ने लगभग सभी जनसेवी सुधारको जैसे–राम मोहन राय, ईष्वर चन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन, एम0 जी0 रानाडे, दयानन्द सरस्वती, देवेन्द्र नाथ टैगोर, रामकृष्ण परमहंस, अरविन्द, रविन्द्रनाथ टगौर, एन0 के0 गांधी डी0 जी0 कर्के, पी0 सी0 मजमूदार, लाजपत राय, बंकिम चन्द्र चटर्जी, मालाबारी, एन0जी0 चन्द्रावरकर, एनी बेसेन्ट, विवेकानन्द, वर्षलिंगम, सरोजनी नायडू कमलादेवी चट्टोपाध्याय, सुचेता कृपालनी, दुर्गावाई देशमुख, रेणुका राय, सरला देवी, मैहम कामा, मारग्रेट कजिन्स, बालकृष्ण–चोपेनकार तथा मुल्कराज का ध्यान आकर्षित किया।[39] ब्रिटिश शासन के माध्यम से अंग्रेजी शिक्षा आयी। अंग्रेजी पढ़ने वालें भारतीय ने समाज सुधारकों की सदस्यता से यह जाना कि भारत पर विदेशियों का शासन था और वे भारतीयों के प्रति ईमानदार नहीं थे। अतः भारत को अवश्य स्वतंत्र होना चाहिए। सन् 1860 तथा 1870 के दशक में राष्ट्रीयता की भावना मजबूत हुई, जिसका अन्तिम परिणति भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना में हुई। सन् 1885 में अपनी स्थापना की तिथि से लेकर सन् 1920 ई0 तक कांग्रेस श्रेष्ठ शिक्षित तथा सम्पन्न लोगों की पार्टी थी। रविन्द्र नाथ टैगोर की बहन स्वर्णकुमारी कलकत्ता में सन् 1900 ई0 में प्रतिनिधि के रूप में कांग्रेस अधिवेशन में सम्मिलित होने वाली पहली महिला थी।

संदर्भ सूची

1. बी0 मुकर्जी 'कम्यूनिटी डेवलपमेण्ट एण्ड पंचायतीराज, दी इण्डिया जनरल आफ पब्लिक एडिमिनिस्ट्रेशन, वाल्यूम 8 नं. 4, अक्टूबर– दिसम्बर, 1962, पृष्ठ– 579–580 ।
2. एस0 के0 डे0 पंचायती राज दिल्ली, राजकमल, प्रकाशन, 1962, पृष्ठ– 75 ।
3. बी0 मुकर्जी 'कम्यूनिटी डबलपमेण्ट एण्ड पंचायती राज' दी इण्डिया जनरल आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, बाल्यमू 8 नं0 4 अक्टूबर दिसम्बर 1962, पृष्ठ– 587।
4. जयप्रकाश नारायण, स्वराज फार दी पीपुल, वाराणसी, अखिल भारतीय सर्व सेवा संघ, 1961, पृष्ठ– 7–8 ।
5. आज 30 जुलाई, 1979, पृष्ठ–4 ।

6. एस0 के0 डे0 पंचायती राज, सिन्थेसिसि ओरिएण्ड लांगमैन, 1969 ।
7. रिपोर्ट आफ द टीम टू स्टडी कम्यूनिटी प्रोजेक्ट एण्ड नेशनल इम्सअेंसन, एशिया, 1957, पृष्ठ–23
8. सी0 वी0 भाम्भरी, पोलिटिकल पार्टी एण्ड पंचायती राज सम थ्योरिटिकल कन्सीडरेसन, द्वारा उद्धृत इकबाल नारायण (सम्पादक), पृष्ठ–310 ।
9. जियाउदीन खान, पंचायती राज एण्ड डेमोक्रेसी, द्वारा उद्धृत इकबाल नारायण, पृष्ठ–262।
10. बलवन्त राय मेहता कमेटी रिपोर्ट।
11. एस0 के0 डे0 समरश्यूज, एम0 वी0 माधुर एण्ड इकबाल नारायण, (एडिटेड), पंचायती राज प्लानिंग एण्ड डेमोक्रेसी बम्बई, एशिया पब्लिकेशन हाऊस, 1969, पृष्ठ–84।
12. रमन के0 उस0 बी0, ''बिल पंचायत कम'' कुरूक्षेत्र, बाल्यूम 11 नं0, 2, अक्टूबर 1962, पृष्ठ–46–48 ।
13.विमेन इन हिन्दू माइथालॉजी, योजना, भाग 19 नं0 13–14 15 अगस्त, 1975 पृष्ठ–34–37।
14. वाई0 एस0 परमार, पोलीऑड्री इन द हिमालय ताज, नईदिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाऊस, 1973, पृष्ठ–33।
15. वही, पृष्ठ–33।
16. विमेन पावर, द इलस्ट्रेट वीकली आफ इण्डिया भाग नं0 96, नं0 41, 12 अक्टूबर, 1975, पृष्ठ–8–12 ।
17. वाइ0 एस0 परमार, वहीं, पृष्ठ–34 ।
18. एस0 डोरापर स्वामी, एजुकेशन एडवान्समेण्ट एण्ड सोसीयोइकोनामिक पार्टी सीपेन ऑफ वीमेन इन इण्डिया पर्सपेक्टिव प्राब्लम्स, इनपेडिमेन्ट्स कनसर्न्स, न्यू देलही डायरेक्टेरेट आफ नेशनल एडल्ट एजूकेशन, मिनिस्ट्री आफ एजूकेशन एण्ड शोसल वेलफेयर, गर्वन्मेण्ट आफ इण्डिया, 1975, पृष्ठ–1।
19. विक्टर एस0 डिसोजा ''फेमिली एटेटस एण्ड फीमेल वर्क पार्टी सीपेशन इम्पीरिकल एनालिसिस ''सोशल एक्शन, भाग 25 नं0 3 जुलाई सितम्बर, 1975, पृष्ठ–267–76।
20. इबिलाइन सल्लेराट, वीमेन सोसाइटी एण्ड चेन्ज 1971 (आंग्ल भाषा में अनुवाद) के मार्गरेट स्कॉटफोर्ड, पृष्ठ–75 ।
21. लाजपत राय, अनहैप्पी इण्डिया, कलकत्ता, 1923, पृष्ठ– 70,80 ।
22. सुजाता मनोहर, ''रीड्स टू वीमेन्स इक्वालिटी'' जर्नल आफ फीमेल वेलफेयर, वाल्यूम 22 नं0 2 दिसम्बर, 1975, पृ0 32–37, मेहरा मसानी, ''इण्डियन बीमेन सेकेन्ड क्लास सिटिजेन्स, द इलस्ट्रेटेड वीकली आफ इण्डिया, वाल्यूम 96, नं0 9, 2 मार्च 1975, पृष्ठ– 4–13 ।
23. ए0 एस0 अल्तेकर, द पोजीशन आफ वीमन इन हिन्दू सिविलाईजेशन बनारसः मोतीलाल बनारसी, दास पब्लिशर्स, 1965, पृष्ठ– 61 ।
24.अन्नू मेनन मजूमदार ''सोशल वेल्फेयर इन इण्डिय'' बाम्बे, एशिया, 1964, पृष्ठ 87–120
25. इस्लामिक कानून के अन्तर्गत स्वामी के निधन के बाद सम्पत्ति पर उन विभिन्न हिस्सेदारों (स्त्री और पुरूष) जो वास्तव में अपने भाग के अधिकारी है उनके बीच विभाजित हो जाता है। विवाह के बावजूद स्त्री अपना अधिकार नहीं खोती ऐसा हिन्दूओं के संबंध में नही है। तारा अलीवेग, विमन आफ इण्डिया नई दिल्ली पब्लिकेशन डिविजन, गर्वनमेन्ट आफ इण्डिया 1958, पृष्ठ–21।
26. रूप एल0 चौधरी, हिन्दू विमन्स राइट टू प्रापर्टी पास्ट एण्ड प्रेजेन्ट, कलकत्ता, 1961, पृष्ठ– 20
27.. एल0 एस0 एस0 ओ मैली, इण्डियाज हेरिटेज, नई दिल्ली, 1976, पृष्ठ 129, माग्रेट कोटमेक, द हिन्दू विम, बाम्बेः एशिया, 1963, पृष्ठ– 67–69।
28. ए0 एस0 अल्तेकर, वही पृष्ठ– 67 ।
29. मुस्लिम शासन के अन्तर्गत भारतीय महिलाओं की बदलती हुयी स्थिति का तुलानात्मक अध्ययन है, रेखा मिश्रा, विमेन इन मुगल इण्डिया, 1526–1748, ए0डी0 दिल्ली मुन्सीराम मनोहरलाल, 1967, पृष्ठ–1
30. पुरूषोत्तम नागर, लाला लाजपत राय द मैन एण्ड हिज आइडियाज, नई दिल्ली, मनोहर, 1977, पृष्ठ–1। लाजपत राय, द आर्यसमाज, लन्दन लांगमैन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी, 1951 पृष्ट 5 मेरी फ्रासिन्सस विलिंग्टन, बुमन इन इण्डिया, न्यू दिल्ली अमेरीकी बुक एजेन्सी, 1973, पृष्ठ 26–27 ।
31. ए0 एस0 अल्तेकर, वही पृष्ठ– 70 ।
32. मनमोहन कौर, रोल आफ विमन इन द फ्रीडम मूवमेन्ट, 1857–1947, दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिसर्स प्राइवेट लिमिटेड, 1968, पृष्ठ– 3–6 ।

33. डनजील चार्ल्स इन्इेटसन, पंजाब कास्टस लाहौर, 1974, पृष्ठ– 252 ।
34. एच0 एच0 हाइमैन, द अवेकनिंग आफ एशिया, लन्दन, 1919, पृष्ठ–1।
35. मनमोहन कौर वही पृष्ठ–67।
36. के0 के0 गंगाधर, इण्डियन नेशनल कान्ससनेसः ग्रोथ एण्ड डेवलेपेंट, नई दिल्ली, 1972, पृष्ठ–72।
37. वही, पृष्ठ–165–66 ।
38. देवेन्द्र कुमार चौधरी आर्य समाज इन पंजाब 1977–1901, अप्रकाशित एम0, लघु शोध प्रबन्ध, पंजाबी यूनिर्वसिटी, पटियाला, 1979, पृष्ठ–121–22।
39. बी0बी0 मजूमदार, हिस्ट्री आफ सोसल एण्ड पालिटिकल आइडियाजः फ्रॉम राममोहन राय टू दयानन्द कलकत्ता, 1967 ।

LBP PUBLICATION